हिमाचल की लोककथाएं

हिमाचल की लोककथाएं

संतोष शैलजा

राजपाल

मूल्य : तीस रुपये (30.00)
संस्करण : 2006 © राजपाल एण्ड सन्ज़
ISBN : 81-7028-333-7
HIMACHAL PRADESH KI LOK KATHAYEN (Folk Tales) by Santosh Shailja
राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

क्रम

सच-सच बोल री मैना 5
चमत्कारी अतिथि 11
पुत्र या पत्थर 16
तुम दो खाना और मैं तीन 22
तू डाल-डाल मैं पात-पात 26
अनमोल सीख 31
अयोध्या के देवता कुल्लू में 35
नहले पर दहला 39
भाग्य जाग उठा 44

सच-सच बोल री मैना

एक थी राजकुमारी। गुड़िया-सी प्यारी... परियों-सी सुंदर। दिल इतना नरम जितना मक्खन! मन इतना साफ़ जितना झील का जल। माता-पिता की लाड़ली बेटी। बोलती तो जैसे मुख से फूल झरते। एक उसकी सहेली थी। दोनों पास के मंदिर में रोज़ पूजा करने जातीं। प्रतिदिन पुजारी बाबा को राजकुमारी सोने का सिक्का भेंट देती और उसकी सहेली—जो मंत्री की बेटी थी—चांदी का सिक्का देती। बाबा रोज़ एक ही आशीष दोनों को देते। राजकुमारी को कहते—"तुम्हारा ब्याह एक शव से होगा।" मंत्री की बेटी को कहते—"तुम्हारा ब्याह एक राजकुमार से होगा।"

बचपन की बात दोनों खेल-खेल में भूल जातीं। पर जब बड़ी हो गईं, तो पुजारी के इन शब्दों का भावार्थ समझने लगीं। अब राजकुमारी बहुत उदास रहने लगी। घंटों अकेली बैठी सोचती रहती। 'मैंने क्या कसूर किया है जो मेरा ब्याह एक शव से होगा—आह!' सिसकियां भरती राजकुमारी के राजकुमार-दूल्हे के सब सपने चूर हो जाते। सोने-सा रंग धूमिल पड़ गया। गुलाब-से अंग मुरझाने लगे। राजकुमारी को न खाने की इच्छा रही, न पीने की। न उसे पहनने से लगाव रहा, न सजने से। न हंसती, न गाती।

धीरे-धीरे यह बात राजा-रानी तक जा पहुंची। दोनों बड़े

व्याकुल हुए। क्योंकि वे जानते थे कि पुजारी-बाबा की भविष्यवाणी कभी झूठी सिद्ध नहीं हुई थी। अतः कोई भी उपाय निष्फल था। उनका भी राजकाज से मन उचाट हो गया। एक दिन राजकुमारी का मन बहलाने के लिए राजा उसके साथ घूमने निकले।

घूमते-घूमते दोनों राज्य की सीमा पार कर जंगल में आ पहुंचे। राजकुमारी का मन प्राकृतिक छवि में ऐसा रम गया था कि वह लौटना न चाहती थी। शाम पड़ने लगी थी। चिन्तातुर राजा ने रात वहीं कहीं बिताने की सोची। चारों ओर किसी आश्रय के लिए नज़र दौड़ाई। अचानक एक छोटा-सा मकान दिखाई दिया। दोनों ने चैन की सांस ली और उधर चल पड़े। मकान बिलकुल सुनसान लग रहा था। राजकुमारी भागती हुई दरवाज़ा खोलकर अन्दर जा घुसी। पीछे-पीछे राजा आ रहा था। पर यह क्या? राजकुमारी के अंदर घुसते ही मकान का दरवाज़ा बंद हो गया। राजा लपककर आगे बढ़ा और दरवाज़े को धकेला पर पूरा ज़ोर लगा देने पर भी दरवाजा टस-से-मस न हुआ। अंदर से राजकुमारी ने ज़ोर लगाया। बाहर से राजा ने बड़ी कोशिश की। पर दरवाज़ा तो मानो 'सील' हो गया था। अब क्या हो? बेटी अंदर कैद हो गई और पिता बाहर विवश खड़ा रह गया। इस विचित्र संकट की तो उन्हें कल्पना भी न थी।

असहाय राजकुमारी आंसू बहाने लगी। सारी रात यूं ही रोते-कलपते बीत गई। सुबह हुई तो वह उठकर मकान के अंदर घूमने लगी। उसके आश्चर्य की सीमा न रही, जब उसने देखा कि मकान में कई कमरे थे और सबमें करीने से सामान लगा था। खाने-पहनने का सब सामान वहां था। देखते-देखते जब वह आख़िरी कमरे में पहुंची, तो उसके मुंह से चीख़ ही निकल गई।

उसने देखा—वहां पलंग पर एक पुरुष का शव पड़ा था।

कुछ पल तो वह हक्की-बक्की खड़ी रह गई। भय व शोक से उसका शरीर कांप उठा। फिर धीरे-धीरे उसे इस सबका अर्थ साफ़ समझ आने लगा। उसे लगा कि पुजारी-बाबा की भविष्यवाणी सत्य हो रही है। और उसका भाग्य ही उसे इधर खींच लाया है।

रात को सोते समय वह बड़ी व्याकुलता से ईश्वर को पुकारने लगी—"भगवन्! यह कैसा क्रूर भाग्य मेरा लिख दिया है? प्रभु! दया करो—मुझे यूं ज़िंदा मत मारो..." ऐसे रोते-रोते उसकी आंख लग गई। उसे सपना आया—कोई अदृश्य वाणी उसे कह रही थी—"बेटी, धैर्य रखो। प्रतिदिन सुबह सूर्य का पूजन करो और इस शव पर उग आई 'दूब' का एक-एक तिनका रोज़ तोड़ती रहो। जब आख़िरी तिनका निकल जाएगा, तब तेरा पति जीवित हो जाएगा।"

अगले दिन सुबह राजकुमारी बड़ी उमंग से उठी। अब उसमें जीने का उत्साह लौट आया। उसने बड़े भक्ति-भाव से स्नान आदि कर सूर्यदेव की पूजा की और फिर बड़ी श्रद्धा से उस शव पर उगी हुई 'दूब' का एक तिनका खींचकर निकाल दिया।

अब वह नियम से यह दिनचर्या निभाने लगी। काफी दिन बीत गए थे। उसका पिता भी तीन दिन बाहर बैठने के बाद अपने राज्य लौट गया था। एक दिन कोई तेल का व्यापारी उस जंगल से गुज़रा। उसने पानी के लिए दरवाज़ा खटखटाया। आश्चर्य था कि अब दरवाज़ा खुल गया था। राजकुमारी ने उसे पानी दिया। व्यापारी के साथ उसकी युवा लड़की थी। उसे देख राजकुमारी को अपनी सहेली की याद आ गई। इस मकान का अकेलापन उसे काटने दौड़ता था। अतः उसने व्यापारी की मिन्नत कर, उसकी लड़की को अपने पास रख लिया। अब दोनों का समय अच्छा बीतने लगा।

व्यापारी की बेटी रोज़ उसे सूर्य-पूजा करते और शव से तिनका निकालते देखती। एक दिन उसने इसका कारण पूछ लिया। सरल-चित्त राजकुमारी ने सारी बात कह सुनाई। व्यापारी की बेटी के मन में कुटिलता आ गई। एक दिन उसने देखा कि अब दूब का आख़िरी तिनका निकालने को बचा था। बस, सुबह वह राजकुमारी से पहले उठी। सूर्य की पूजा की और आख़िरी तिनका शव से खींच निकाला। तिनका निकलने की देर थी, पुरुष ऐसे उठ बैठा जैसे नींद से जागा हो। उठते ही उसकी नज़र व्यापारी की बेटी पर पड़ी। बस, दोनों में प्रेम हो गया और उसी क्षण दोनों ने परस्पर हार डालकर विवाह कर लिया। व्यापारी की बेटी अपनी योजना की सफलता पर फूली न समा रही थी।

प्रतिदिन के समय अनुसार राजकुमारी उठी और सूर्य-पूजा के बाद अन्दर कमरे में पहुंची, तो दोनों को बैठे हंसते-बोलते देख सन्न रह गई। उसे देखते ही व्यापारी की बेटी ने पति से कहा कि वह उनकी दासी है। राजकुमारी शोक व आश्चर्य से ऐसी सन्न हुई कि उसके मुंह से एक शब्द न निकल सका। भाग्य ने उसे दुबारा अन्धेरी खाई में धकेल दिया था। चुपचाप वह बाहर आ गई और दासी की तरह काम करने लगी।

ऐसे काफी दिन बीत गए। एक दिन जब वह पुरुष बाज़ार जाने लगा, तो उसने दोनों से अपनी मनचाही चीज़ मंगवाने को पूछा। व्यापारी की बेटी ने चूड़ियां, बिन्दी, साड़ी आदि मंगवाईं जबकि राजकुमारी ने केवल 'मैना' पक्षी लाने को कहा। शाम को दोनों को मनपसन्द चीज़ें मिल गईं।

अब राजकुमारी को अपने दुख का एक साथी मिल गया था। वह जब भी काम-काज से निबट जाती, तभी एकान्त में मैना को लेकर बैठ जाती और उसे अपनी दर्दभरी कहानी सुनाने

लग पड़ती। उसे लगता मानो उसकी बचपन की सहेली ही सुन रही हो। उसके मन का बोझ हल्का हो जाता। कई बार व्यापारी की बेटी ने उसकी मैना को छीनना भी चाहा, पर हर बार पुरुष की दयालुता से बच जाती। एक दिन व्यापारी की बेटी ने अपने पति से शिकायत की कि मैना को दासी उल्टी-सीधी बातें पढ़ाती है, इसलिए इसे मार डालो या घर से निकाल दो।

पुरुष ने सच्चाई जानने के लिए, मैना के पिंजरे को अपने कमरे में रखवाया और उसे पिंजरे से बाहर निकाला। चूंकि यह प्रसिद्ध है कि मैना सदा सत्य कहती है। उसने मैना से पूरी कहानी सुनाने को कहा। मैना ने वह कहानी सुनानी शुरू कर दी। एक ओर व्यापारी की बेटी बैठी थी, दूसरी ओर राजकुमारी। एक के चेहरे का रंग फक हो रहा था और दूसरी का चेहरा चमक रहा था। कहानी सुनाते-सुनाते जब मैना यहां तक पहुंची, जब व्यापारी की बेटी ने शव की दूब का आख़िरी तिनका खींचकर निकाल दिया था—तो व्यापारी की बेटी से रहा न गया। वह झपट कर मैना को पकड़ने लगी। मैना 'फुर्र' से उड़कर दीवार पर जा बैठी और कहानी पूरी कर दी। अब तो पुरुष के क्रोध की सीमा न रही। व्यापारी की बेटी को खड़ा कर उसने कड़ककर पूछा—"बोल, यह सब सत्य है," अब उससे झूठ न कहा गया। उसने सिर हिलाकर अपना अपराध मान लिया। पुरुष ने उसे मार डालने को तलवार खींच ली। किन्तु दयालु राजकुमारी ने उसे क्षमा कर देने की प्रार्थना की।

पुरुष—जो वास्तव में एक शापग्रस्त राजकुमार था—राजकुमारी की तपस्या व प्रेम के अधीन हो गया। उसने राजकुमारी से विवाह किया और अपनी ससुराल गया, जहां राजा-रानी उन्हें देखकर प्रसन्नता में झूम उठे।

चमत्कारी अतिथि

सर्दियों की रात थी। ज़ोरों से मेह बरस रहा था। ऐसी अंधेरी ठंडी रात में देवी लक्ष्मी और विष्णु को धरती पर घूमने की सूझी। वास्तव में, वे किसी मानव की परीक्षा लेना चाहते थे। दोनों ने वेष बदला। ग़रीब, फटेहाल पति-पत्नी के रूप में भीगते-भीगते वे चल पड़े। सामने ही एक आलीशान भवन था। दोनों ने द्वार खटखटाया। अंदर से धनवान गृहस्वामी निकला। उन दोनों की शक्ल-सूरत से वह समझ गया कि उसकी कोठी में मज़े उड़ाने को वे आना चाहते हैं। तुरन्त बोल उठा—"जाओ, जाओ। यह भिखमंगों की सराय नहीं है।" और दरवाज़ा बंद कर लिया।

बेचारे पति-पत्नी असहाय खड़े रहे। तभी उनकी नज़र पास की झोंपड़ी पर पड़ी। मरते क्या न करते! उन्होंने झोंपड़ी का द्वार खटखटाया। तुरन्त दरवाज़ा खुला और अंदर से लैम्प हाथ में लिए हुए गृहस्वामिनी ने कहा—"आइए, अंदर आइए। आप बुरी तरह भीग गए हैं।"

झोंपड़ी के अंदर कदम रखते ही उन्होंने भांप लिया कि इसके मालिक की दशा दयनीय है। दो टूटी चारपाइयां पड़ी थीं। उन्हीं पर सादर बिठाते हुए गृहस्वामिनी शीघ्र ही अंदर

गई और फटे-पुराने कपड़े लाकर बोली—"बेशक, ये कपड़े आपके पहनने लायक नहीं। फिर भी आप अपने गीले कपड़े बदल डालें।"

जब तक लक्ष्मी और विष्णु कपड़े बदलते, तब तक उसने गरम-गरम बाजरे की रोटी उनके सामने लाकर रख दी और संकोच से बोली—"अतिथि भगवान का रूप होता है। पर मेरे पास आपकी सेवा के लिए यही रूखा-सूखा भोजन है।"

उसी समय उसका पति सिर पर लकड़ियों का बोझ उठाए हुए भीतर दाख़िल हुआ। ज्योंही उसकी नज़र अतिथियों पर पड़ी, उसका चेहरा खिल उठा। आगे बढ़कर पांव छूए। भोजन करवा के उन्होंने अतिथियों को अपनी दोनों चारपाइयों पर सुला दिया और स्वयं दोनों ज़मीन पर सो गए।

सुबह होते ही अतिथि जाने लगे। जाने से पहले उन्हें ग़रीब पति-पत्नी ने रोटी बना के साथ बांध दी। उनकी निश्छल सेवा से गद्‌गद होकर उन्होंने वरदान दिया—"तुम्हारी सेवा का फल तुम्हें जरूर मिलेगा। आज जिस काम को तुम शुरू करोगी वह शाम तक होता रहेगा।" यह कहकर दोनों चले गए।

अब झोंपड़ी वाली ने रात की सब्ज़ी वाले पतीले को साफ़ करने के लिए उठाया तो देखकर चकित रह गई। यह तो सोने की मुहरों से भरा था। उसने उन्हें पलट दिया—लेकिन वह फिर भी भरा रहा। फिर पलटा, फिर भर गया। शाम तक यही क्रम होता रहा। अब तो वे एक ही दिन में मालामाल हो गए। अब उन्होंने एक बढ़िया मकान ख़रीद लिया और कपड़े की दुकान शुरू कर दी। उनके दिन बड़े सुख-चैन से बीतने लगे।

उनके इस भाग्योदय को देख पड़ोसी व्यापारी व उसकी पत्नी हैरान-परेशान हो गए। आख़िर उनसे रहा न गया। एक

दिन उन्होंने उन पति-पत्नी को घर बुलाया और इस ख़ुशहाली का रहस्य पूछा। सरल-चित्त पति-पत्नी ने बिना लाग-लपेट सब कह सुनाया।

अब तो व्यापारी ने अपना सिर पीट लिया। उसने उस कुघड़ी को जी-भर कोसा, जब अपनी मूर्खता से घर आई लक्ष्मी को ठोकर मार दी थी। बस, एक ही आशा बची थी कि शायद फिर कभी वे करामाती अतिथि आएं। उनकी किस्मत अच्छी थी। एक रात जब ज़ोरों से वर्षा हो रही थी, उन्हीं अतिथियों ने फिर आकर दरवाज़ा खटखटाया। लक्ष्मी और विष्णु शायद उनकी भी मनोकामना पूरी करना चाहते थे।

बड़ी उत्सुकता से व्यापारी ने दरवाज़ा खोला और उन्हें देख वह ख़ुशी से पागल हो उठा। बड़ी आवभगत के साथ उन्हें अंदर ले आया। उसकी पत्नी ने उसी तरह पुराने कपड़े लाकर उन्हें बदलने को दिए। वही बाजरे की रोटी उन्हें खाने को दी गई। लालच ने उन्हें इतना अंधा कर दिया था कि हर बात में उन्होंने ग़रीब झोंपड़ी वाले पति-पत्नी की ही नकल की। वे मन से सेवा करना चाहते, तो अपनी हैसियत के अनुसार अतिथियों को बढ़िया कपड़े या खाना दे सकते थे। परन्तु उन्हें तो धन पाने की लालसा थी ना कि दुखियों की सेवा करने की।

रात को मेहमानों को चारपाई पर सुलाकर वे दोनों ज़मीन पर सोए। सुबह की इन्तज़ार में दोनों रात-भर करवटें ही बदलते रहे। सुबह जब वे चलने लगे, तो साथ बाजरे की रोटी बांधकर देते हुए पति-पत्नी हाथ जोड़कर वरदान की लालसा में खड़े हो गए। लक्ष्मी और विष्णु मन-ही-मन मुस्करा उठे और बोले—"तुम्हारी मनोकामना पूरी होगी। जो

काम तुम अभी शुरू करोगे, वह शाम तक होता रहेगा।"

अब क्या था? मनचाहा वर पाकर दोनों की ख़ुशी की सीमा न रही। पागल-से दोनों उस सब्ज़ी वाले पतीले को खोलने को भागे। पहले तो इसी बात पर उनमें खूब झगड़ा हो गया कि पहले कौन खोले। पति कहता था—उसने अधिक सेवा की है और उसका हक पहला है, जबकि पत्नी अपना हक समझती थी। ख़ैर, काफी देर की बहस के बाद फ़ैसला हुआ कि पत्नी ही पतीले को पलटे।

ज्योंही व्यापारी की पत्नी ने पतीले को खोला, उसमें रात की सब्ज़ी पड़ी थी (कंजूस पत्नी ने रात अतिथियों को रोटी के साथ सारी सब्ज़ी भी नहीं परोसी थी। जब उसने पतीले को पलटा, तो उसमें से वह बची हुई सब्ज़ी नीचे आ पड़ी। बस, अब वह पतीले को पलटती जाती, और सब्ज़ी नीचे गिरती जाती। वरदान के अनुसार अब शाम तक यही काम जारी रहना था।

दोनों ने एक बार फिर अपना सिर पीट लिया। एक बार फिर उन्हें लक्ष्मी ने पटकनी दे दी थी। लेकिन कसूर अब भी उनका ही था। लालची पति-पत्नी शाम तक पतीले को पलटते और उसमें से गिरती सब्ज़ी से गंदा हो गया फ़र्श साफ़ करते-करते थककर चूर हो गए।

पुत्र या पत्थर

एक था राजा, जिसकी सात रानियां थीं। प्रजा खुशहाल थी। राजा सदाचारी था। लेकिन उसका चेहरा सदा दुःख की छाया से घिरा रहता। क्योंकि वह संतान के सुख से वंचित था। एक-के-बाद एक कर उसने सात ब्याह किए। पर किसी रानी से उसे बच्चा प्राप्त न हुआ। अन्त में प्रजा के आग्रह पर उसने आठवां ब्याह किया। ईश्वर की कृपा से आठवीं रानी गर्भवती हो गई। राजा और प्रजा के उल्लास की सीमा न रही। राजा ने ग़रीबों को दान दिया। पंडितों-पुरोहितों से पूजा करवाई। प्रजा ने जगह-जगह उत्सव मनाए। राजकुमार की आशा ने सबकी मुरझाई आशाएं खिला दी थीं।

किन्तु ज्यों-ज्यों वह दिन निकट आ रहा था, सातों रानियां ईर्ष्या की आग में भस्म हुई जा रही थीं। उन्हें राजकुमार के आने की कोई खुशी न थी। वे तो नई रानी के भाग्योदय में अपना दुर्भाग्य देख रही थीं। आख़िर उन्होंने एक षड्यंत्र सोच लिया। वे राजा से मिलीं और निवेदन किया—"बड़ी तपस्या के बाद अब हमें राज्य का उत्तराधिकारी मिलने वाला है, इसलिए हम सातों अपनी आठवीं बहन की देखभाल करेंगी। महाराज को रानी के प्रसव के लिए किसी और का प्रबन्ध करने की ज़रूरत नहीं।"

राजा भोला था। उनकी बातों में आ गया और नई रानी के प्रसव का सारा काम सातों रानियों के सुपुर्द कर निश्चिन्त हो गया। समय आने पर रानी ने एक सुन्दर स्वस्थ पुत्र को जन्म दिया। किन्तु वह उसे देख न सकी। कुटिल सातों रानियों ने प्रसव से पहले उसकी आंखों पर पट्टी बांध दी थी और उसे किसी दवा से बेहोश भी कर दिया था। उन्होंने रानी को पहले बता दिया था कि ज्योतिषीजी ने कहा था कि राजकुमार पर पहली दृष्टि मां की नहीं पड़नी चाहिए। राजकुमार के जन्मते ही उसे मां के पास से हटा दिया गया और उसकी जगह एक बड़ा मूसल (पत्थर) रख दिया गया। जब महाराज उत्सुकता से पुत्र को देखने आए, तो रानियों ने शोकपूर्ण मुद्रा बना ली और नई रानी की बग़ल में पड़े पत्थर को दिखाते हुए बोलीं—"महाराज! हमारी तो किस्मत ही फूट गई! हमने पुत्र मांगा था, पर मिला है पत्थर! पत्थर को जन्म देने वाली स्त्री नहीं, जादूगरनी है जादूगरनी!"

राजा के लिए यह वज्रपात था। उसकी आशाओं के महल पल-भर में चकनाचूर हो गए। शोक व क्रोध में वह पागल-सा हो गया। और उसने नई रानी को 'दासी' बना देने का फ़ैसला किया।

सातों रानियां यही चाहती थीं। अब वे मज़े से ऐश करतीं और बेचारी आठवीं रानी दासी बन सबकी सेवा करती।

अब उस बच्चे का क्या बना? रानियों ने उसे किसी सेवक द्वारा एक बड़े सर्प के आगे फिंकवा दिया, ताकि वह उसे डस ले। पर आश्चर्य! सर्प ने अपना फन उठाकर बच्चे पर छत्रछाया की और फिर चला गया। अब उन्होंने बच्चे को हाथी के आगे डाल दिया। लेकिन हाथी ने भी इस कुकृत्य में शामिल होने

से इन्कार कर दिया और उसे अपनी सूंड से छू कर चला गया। इतने पर भी उनके दिल पर दया न आई। उन्होंने बच्चे को एक बक्स में बन्द कर नदी की धारा में बहा दिया।

वह बक्स बहते-बहते एक मछियारे के जाल में अटक गया। मछियारे ने बक्स खोलकर एक सुन्दर बच्चे को देखा। भगवान का वरदान समझ वह उसे घर ले आया और उसका पालन-पोषण करने लगा।

बचपन से उस बालक के सब लक्षण राजसी थे। उसका रूप, कद-काठ सब राजसी था। उसे बस एक ही शौक था—धनुष-बाण लेकर जंगल में आखेट करना। निशानेबाज़ी में वह इतना अचूक था कि उसका नाम ही पहले 'गुलेल', बाद में 'गोल' पड़ गया।

'गोल' की एक और विलक्षण बात थी कि उसे अपने 'राजकुमार' होने का ज्ञान था। वह अपने जन्म से सम्बन्धित सब बातें जान चुका था। एक दिन शिकार करते-करते वह अपने पिता के राज्य की सीमा पर बहने वाली नदी के किनारे जा पहुंचा। थोड़ी देर में वहां राजा की रानियां नहाने तथा पानी भरने आईं। उनके साथ आठवीं दासी-रानी भी थी। जब वे सब पानी के घड़े उठाकर जाने लगीं, 'गोल' ने दूर से ऐसा निशाना बांधा कि एक-एक कर सातों घड़े टूटकर गिर पड़े। किन्तु आठवीं दासी-रानी के घड़े में उसने फूल का निशाना बांधा और वह फूल उसके बालों में अटक गया। सातों रानियां रोती-कलपती महल में पहुंचीं।

अगले दिन जब वे नदी पर पहुंची, तब फिर 'गोल' वहां मौजूद था। आज उसके साथ एक लकड़ी का घोड़ा भी था। जब रानियां घड़े भरने लगीं, तो वह अपना घोड़ा लेकर आगे

आया और बोला—"ठहरो, पहले घोड़े को पानी पीने दो।" रानियां व्यंग्य से बोलीं—"भला लकड़ी का घोड़ा भी पानी पीता है?" किन्तु 'गोल' अपनी बात पर अड़ा रहा। जब उन्होंने जबरन घड़े भरने चाहे, तो 'गोल' ने उनके घड़े तोड़ डाले। किन्तु आठवीं दासी-रानी के घड़े को उसने अपने हाथों से भरा और उसे दे दिया।

अब तो सातों रानियों के क्रोध की सीमा न रही। उन्होंने राजा से शिकायत की। राजा सारी बात सुनकर क्रोधित हुआ। लड़के को दरबार में बुलाया।

जब 'गोल' राजा के सामने लाया गया, तो राजा ने प्रश्न किया—"लड़के! तुमने रानियों के घड़े क्यों तोड़ दिए?" 'गोल' ने निर्भीकता से उत्तर दिया—"महाराज! उन्होंने मेरे काठ के घोड़े को पहले पानी न पीने दिया जबकि मेरा घोड़ा बहुत प्यासा था। आख़िर उनके घड़ों का पानी तो बाद में प्रयोग आना था, जबकि मेरे घोड़े को उसी क्षण पानी चाहिए था।"

उसका विचित्र तर्क सुन राजा को क्रोध के बदले हंसी आ गई। बोले—"अरे मूर्ख लड़के! कहीं काठ का घोड़ा भी पानी पी सकता है?"

अब 'गोल' मुसकराते हुए बोल पड़ा—"महाराज! अगर महारानी पुत्र के बदले पत्थर को जन्म दे सकती है, तो काठ का घोड़ा भी पानी पी सकता है।"

'गोल' के उत्तर से सभा में सन्नाटा छा गया। स्वयं राजा सन्न रह गया। उसी क्षण गोल की मां दासी-रानी—जो परदे के पीछे से सब वार्ता सुन चुकी थी—भागती हुई सभा-भवन में आई। अपने बिछुड़े पुत्र को छाती से लगा लिया। अब राजा सच्चाई समझ गया। आठवीं रानी ने राजा को सबकुछ बता

दिया। राजा रानियों के इस क्रूर षड्यंत्र को सुनकर क्रोध से आग-बबूला हो उठा। उसी क्षण राजा ने सातों रानियों को मृत्युदण्ड सुना दिया। किन्तु 'गोल' ने पिता से उनके लिए दया की प्रार्थना की। तब राजा ने उन्हें केवल राज्य से निर्वासित कर दिया।

अब 'गोल' राजकुमार घोषित हुआ। धूमधाम से उसे राज्य-सिंहासन सौंपकर राजा-रानी सुख से रहने लगे। आज भी पहाड़ी राजाओं में 'गोल' राजा को अवतार के रूप में याद किया जाता है।

तुम दो खाना और मैं तीन

रमोलीहाट नामक छोटा-सा गांव। कुल छः घरों की बस्ती। एक घर में एक बूढ़ा-बूढ़ी रहते थे। दोनों की एक ही उमर—सत्तर वर्ष। दोनों में बहुत प्रेम था। परस्पर हंसते-बोलते एकसाथ खाते-पीते। खूब अच्छी गुज़र रही थी। एक दिन खूब वर्षा हुई। सांझ होते ही बूढ़ा बोला—"आज तो पकौड़े खाने का मन है। क्या घर में बेसन है?"

बूढ़ी ने डिब्बे में देखा—थोड़ा-सा बेसन था। उसने कहा—"थोड़ा-सा बेसन है। अब बारिश में कौन लेने जाए? इससे ही जितने बने, बना लेती हूं।"

दोनों एकसाथ पकौड़े बनाने लगे। पकौड़े बने कुल पांच। जब तैयार हो गए, तो बूढ़ा बोला—"तुम जानती ही हो गांव का नियम। जहां जो भी नई चीज़ बने, उसे बांटकर खाया जाता है। सो पहले गांव में बांट दो।"

अब बुढ़िया हैरान-परेशान। पांच पकौड़ों में से क्या बांटे और क्या पति को खिलाए। आख़िर सोचकर बोली—"मैं कल दुकान से ज्यादा बेसन लाकर पकौड़े बनाऊंगी और गांव में बांट दूंगी। आज हम खा लेते हैं।"

ग़नीमत थी कि पति ने पत्नी का प्रस्ताव मान लिया।

खुशी-खुशी पत्नी ने एक प्लेट में तीन पकौड़े रखे और एक में दो। तीन पकौड़ों वाली प्लेट उसने पति के आगे रख दी और दो पकौड़ों वाली खुद ले ली।

वह खाने को उत्सुक थी, पर पति बोल पड़ा—"यह क्या? तुम सिर्फ दो खाओगी और मैं तीन?"

"तो क्या हुआ? पकौड़े ही पांच हैं।" पत्नी ने उत्तर दिया।

"तो तुम ही क्यों नहीं तीन ले लेतीं?" पति का तर्क था।

"वाह! मैं तीन खा लूं और तुम केवल दो? यह मुझसे नहीं होगा।"

"तो तुम्हें कम देकर मैं ज्यादा खा लूं—यह मेरे लिए भी असंभव है।" पति ने प्लेट दूर सरका दी।

अब प्यार की इस तकरार का निपटारा कैसे हो? दोनों ही एक-दूसरे को दिलो-जान से चाहते थे। एक-दूसरे को बराबरी का हिस्सा देना चाहते थे। पर पकौड़े निगोड़े पांच! बराबर कैसे बंटते? बहुत देर चुप बैठे रहे। आख़िर पति ने हल निकाला—"क्यों न हम पांचवां पकौड़ा तोड़कर आधा-आधा बांट लें।"

"नहीं! इससे तो पकौड़े का मज़ा ही न रहेगा।" पत्नी चाहती थी कि पति तीनों पकौड़े खाए।

अब इस बहस में रात हो गई। दोनों ने फ़ैसला किया कि अब सो जाएं। और सुबह जो पहले उठे वही तीन पकौड़े खाए। यह फ़ैसला कर दोनों सो गए। सुबह दोनों की एक साथ आंख खुली। लेकिन दोनों ही आंख मूंदकर सोने का नाटक किए लेटे रहे।

उधर गांववालों ने जब दिन चढ़े तक भी दोनों को उठते

न देखा, तो सब घबराए। उन्होंने आकर बाहर से आवाज़ दी। अन्दर पति-पत्नी शर्त से बंधे चुप पड़े रहे। आख़िर गांववालों ने दरवाज़ा तोड़ डाला। अन्दर आकर देखा—दोनों चित पलंग पर पड़े थे। सबने समझा कि वे मर गए हैं। बस, रोना-धोना मच गया। थोड़ी देर बाद वे उनके अन्तिम संस्कार की तैयारी करने लगे। जब शव-यात्रा का सामान भी घर में पहुंच गया, तब बूढ़े ने सोचा कि अब और चुप रहना जीवित ही मरना होगा। अतः झटपट उठकर वह बोल उठा—"अच्छा तुम दो खा लेना और मैं तीन खा लूंगा।"

इतना सुनना था कि बूढ़ी भी झटके से उठ खड़ी हुई। सब गांववाले यह समझकर कि—बूढ़े-बूढ़ी के भूत गांव के पांच परिवारों में से दो और तीन को बांटकर खाने की बात कर रहे हैं—सर पर पांव रखकर भागे। 'भूत! भूत!' चिल्लाते हुए जिसे जिधर सूझा, उधर ही दौड़ पड़ा। बहुत देर बाद जब बूढ़े-बूढ़ी ने घर से बाहर निकल सबके पास जाकर उन्हें 'दो और तीन' का भेद समझाया, तो हंसते-हंसते सबके पेट में बल पड़ गए।

तू डाल-डाल मैं पात-पात

एक था डाकू। बड़ा ही चालाक, बहुत होशियार। एक दिन डाका डालने जा पहुंचा एक व्यापारी के घर। व्यापारी की लड़की का ब्याह था। चारों ओर धूम मची थी। घूमता-घामता वह गोशाला के पीछे बने रसोईघर में जा पहुंचा। भांति-भांति के पकवान पक रहे थे। मिठाई की सुगन्ध ने उसके पांव रोक लिए। सोचा—'आज धन-दौलत नहीं, मिठाई लूटी जाए।'

डाकू जा पहुंचा बड़े मिसिर के पास। बोला—"मिसिर महाराज! चाचा जी ने मुझे आपकी मदद के लिए भेजा है—मैं बढ़िया लड्डू बनाना जानता हूं—लाइए मैं भी कुछ मदद करूं।"

भोले-भाले मिसिर महाराज ने उसे व्यापारी का भतीजा समझ लड्डू बनाने का काम सौंप दिया। डाकू ने सचमुच बहुत बढ़िया लड्डू बनाए। फिर उसने उन्हें एक टोकरी में भरकर रख दिया। एक दूसरी टोकरी में नीचे गोबर भरकर ऊपर पत्तल बिछाकर थोड़े-से लड्डू डाले और ढककर उसे भण्डार-घर में रखवा दिया। अब उसने मिसिर से एक बोतल शहद और एक अंगोछा मंगवाया। फिर असली लड्डुओं के टोकरे पर उस अंगोछे को बिछाकर ऊपर गोबर डाल दिया और मिसिर से बोला—"महाराज, चाचाजी ने कहा था कि शहद की यह बोतल

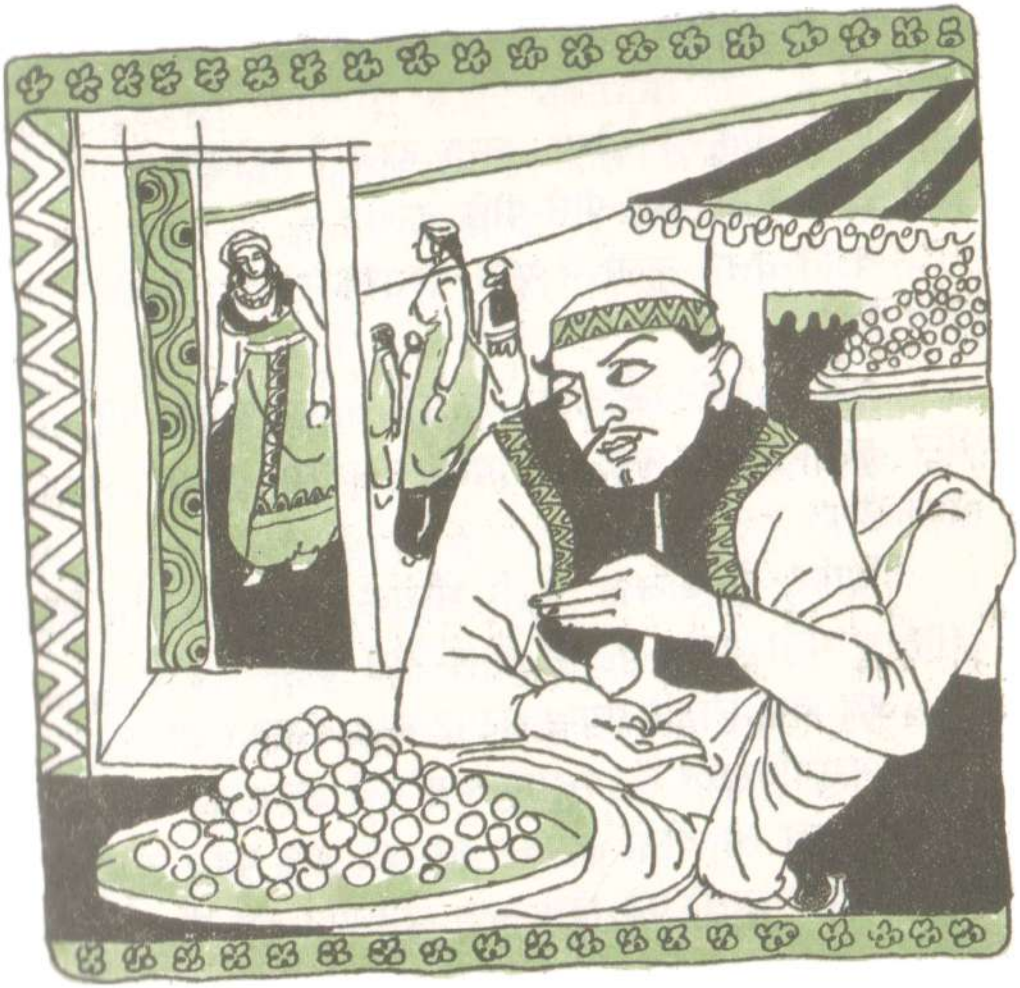

डाक्टर जी के पास दे आना। मैं उधर जा रहा हूं—जाते-जाते यह गोबर का टोकरा बाहर फेंकता जाऊंगा। इससे यहां बड़ी दुर्गन्ध आ रही है।"

मिसिर महाराज ने उसकी बात पर प्रशंसा में सिर हिलाया और वह टोकरे समेत बाहर हो गया। ब्याह की धूमधाम में कौन किसे पूछता है, डाकू मज़े से टोकरा उठाए अपने घर की ओर चल दिया।

लेकिन एक और डाकू उसे कब से ताड़ रहा था। वह भी उसके पीछे-पीछे चल पड़ा। पहले वाले डाकू ने उसे देखा, तो डपटकर पूछा—"कौन है तू? मेरे पीछे क्यों आ रहा है?"

दूसरा डाकू गिड़गिड़ाकर बोला—"हुजूर, कुली हूं। सोचा आपके पास बोझ है—सो मजदूरी के लालच से पीछे आ रहा हूं।"

पहले डाकू ने सोचा—'क्या हरज है—टोकरा उठाने दें।' अब आगे-आगे वह, पीछे-पीछे कुली।

चलते-चलते कुली ने पूछा—"सरकार, इस टोकरे में क्या भरा है?"

डाकू ने डपटकर कहा—"तुमसे मतलब? कुछ भी हो।" फिर कुछ पल बाद बड़ी होशियारी से बोला—"इसमें शहद के बीज हैं।"

"शहद के बीज?" कुली भौंचक-सा उसका मुंह देखने लगा। "भला शहद के भी बीज होते हैं?"

अब डाकू सिटपिटाया। झटपट बात बनाकर बोला—"अबे उल्लू! मधुमक्खियां हैं, मधुमक्खियां। वे शहद को पैदा करती हैं न।" अब तो दोनों ठहाका लगाकर हंस पड़े। डाकू खुश था कि उसने कुली को खूब उल्लू बनाया। इस बीच कुली ने

उसके हाथ में शहद की बोतल देख ली थी। पूछने लगा—"हुज़ूर! इस बोतल में क्या है?"

डाकू तुरन्त बोला—"इसमें ज़हर है, ज़हर।" कुली ने टोकरे के साथ बोतल भी उठा ली और आगे-आगे चल पड़ा। डाकू ने उसकी तेज़ चाल देख कहा—"तू बेशक जल्दी-जल्दी चलकर पुल के पास बनी चाय की दुकान पर ठहर, मैं आता हूं। लेकिन देखना, कहीं बोतल या टोकरे को खोल न बैठना, वरना ज़िन्दा नहीं बचोगे।"

कुली "जी, अच्छा" कहकर आगे चला गया। धीरे-धीरे वह डाकू से काफी दूर पहुंच गया। कुछ देर सुस्ताने के लिए वह टीले पर जा बैठा और कौतूहलवश टोकरा खोलने लगा। ऊपर से गोबर हटने की देर थी—नीचे रखे बूंदी के बढ़िया लड्डू झांक उठे। "धत् तेरे की!" कुलीनुमा डाकू ने फटाफट लड्डुओं पर हाथ साफ़ करना शुरू कर दिया। लगभग तीन-चौथाई लड्डू खा चुकने के बाद उसने बाकी लड्डू एक पत्तल में लपेटकर पेड़ के पीछे छुपा दिए और टोकरे को घास-पत्तों से भरकर चल पड़ा।

मन-ही-मन उसने एक योजना सोच ली थी। चाय की दुकान पर पहुंचते ही उसने टोकरा ज़मीन पर रखा और लगा ज़ोर-ज़ोर से रोने-चिल्लाने। लोग-बाग इकट्ठे हुए। पूछा—"क्या बात हुई?" रोते-रोते बोला—"अरे, मैं बरबाद हो गया। मेरे मालिक ने मुझे शहद के बीज ले जाने को दिए थे। मैं जंगल में आ रहा था तो एक-एक करके वे सब बीज उड़ते गए... और अब टोकरे में एक भी शहद का बीज न रहा..."

"शहद के बीज?" लोग ठठाकर हंस पड़े—"ज़रूर इसका दिमाग़ चल गया है। भला शहद के भी बीज होते हैं?" इतने

में ही आ पहुंचा टोकरे का मालिक डाकू। उसे देख कुली और ज़ोर-ज़ोर से रोने लगा।

"अरे भाई, क्या हुआ?" उसके पूछने पर कुली बोला—"मालिक! आपने शहद के बीजों का टोकरा मुझे उठवाया था न...?"

"हां-हां, वे मधुमक्खियां थीं न! क्या हुआ उन्हें?" डाकू ने सारी भीड़ को समझाते हुए कहा।

"मालिक! वे मधुमक्खियां जंगल में पहुंचते ही एक-एक कर सब उड़ गईं और टोकरा हलका हो गया—अब मैं आपका कसूरवार हूं—मुझे मारें-पीटें, जो चाहे सज़ा दें।"

डाकू सन्न रह गया। कुली तो होशियारी में उसका भी बाप निकला। अकेला होता, तो वह उसे पीट-पीटकर अपना गुस्सा ठंडा कर लेता। सब लोगों के सामने वह क्या कहता? वह तो अपने जाल में खुद ही फंस गया था। अभी वह सोच ही रहा था कि क्या कहे, तुभी कुली बोल पड़ा—"मालिक! आप चाहे मुझे कुछ न कहें—पर मैं आपका इतना बड़ा नुकसान कर अब ज़िंदा नहीं रहना चाहता। इसलिए मैं यह ज़हर की बोतल पीकर अपनी जान दे रहा हूं," और पलक झपकते उसने शहद की बोतल मुंह में लगा ली। उस वक्त अपने को बहुत होशियार समझने वाले डाकू की सूरत देखने लायक थी।

अनमोल सीख

एक बार एक राजा ने नाराज़ होकर अपने राजकुमार को देश-निकाला दे दिया। चलते समय उसके हाथ में तीन लाख रुपए दिए। राजकुमार चल पड़ा अपना भाग्य आज़माने! चलते-चलते एक जंगल से गुज़रा। वहां उसने एक विचित्र साधु देखा, जो ऊंची आवाज़ से पुकार रहा था—"जिसे अनमोल सीख लेनी हो, मुझे एक लाख रुपया दे।" राजकुमार बड़ा चकित हुआ। सोचने लगा—कैसी अनमोल सीख होगी, जिसकी कीमत एक लाख रुपया है। उसने वह सीख लेनी चाही और साधु के पास जाकर बोला—"महाराज! लीजिए एक लाख, अपनी अनमोल सीख दीजिए।"

साधु ने रुपया लेकर उसके कान में कहा—"बेटा! कभी भी किसी के बिस्तर को झाड़े बिना उस पर सोना नहीं चाहिए।" राजकुमार ने ध्यान से सीख सुनी और मन-ही-मन उसे दोहराने लगा।

जब वह चलने लगा, तो साधु ने फिर कहा—"मेरे पास दो और अनमोल सीख हैं। लेकिन उसके लिए दो लाख रुपया देना होगा।"

राजकुमार को साधु की शिक्षा पर विश्वास-सा हो चला था।

उसने बाकी दो लाख भी उसे सौंप दिए और शिक्षा ले ली। साधु ने कहा—"अनजान लोगों के हाथ से कभी कुछ न खाना।" और "रिश्तेदार तभी तुम्हारे रिश्तेदार हैं, जबकि तुम धनवान हो।"

तीन लाख की पूंजी के बदले में तीन सीख लेकर राजकुमार आगे बढ़ गया। अब वह बिलकुल राह का भिखारी था। फिर भी उसे अपनी बुद्धि और बाहुबल पर भरोसा था। और अब तो लाखों के मोल की 'तीन शिक्षाएं' भी उसके पास थीं।

रात हो गई थी, जंगल में उसे एक झोंपड़ी दिखाई दी। रात-भर टिकने की आशा में वह उधर चल पड़ा। झोंपड़ी में एक बुढ़िया थी। उसने राजकुमार का स्वागत किया। राजकुमार थका-मांदा था। इसलिए उसने केवल सोने की इच्छा प्रकट की। बिना खाए-पिए वह बुढ़िया के लगाए बिस्तर पर सोने लगा। ज्योंही वह बिस्तर पर बैठने लगा, बिजली की तरह उसके मन में साधु की पहली सीख याद आ गई। तुरन्त उसने बिस्तर की चादर उठाई और देखते ही उसका सिर घूम गया। चादर के नीचे चारपाई में एक गड्ढा था और नीचे गहरी खाई। यदि वह बिस्तर पर लेट गया होता, तो इस क्षण गहरे गड्ढे में गिर चुका होता। वह समझ गया कि बुढ़िया जादूगरनी है और इस तरह फंसाकर उसे खाना चाहती थी। अब वह समझा कि साधु की सीख क्यों लाख रुपये की थी।

राजकुमार ने जादूगरनी का तलवार से सिर काट दिया और चल पड़ा। अब वह एक बस्ती के पास पहुंच गया। वहां एक झोंपड़ी देख, उसने आराम करने की सोची। झोंपड़ी में एक बुढ़िया और उसकी बेटी रहती थी। राजकुमार को देखकर उन्होंने बड़ा आदर-सत्कार किया। जब उसे खाना परोसा गया, तो खाने से पहले राजकुमार को साधु की दूसरी सीख याद

आ गई। उसने एक ग्रास तोड़कर पास बैठी बिल्ली को खिलाया। रोटी खाते ही बिल्ली ने दम तोड़ दिया। राजकुमार सन्न रह गया। साधु की सीख ने दूसरी बार उसके प्राण बचा लिए थे। उसने थाली को ठोकर मारी और वहां से चल पड़ा।

अब वह उस नगर जा पहुंचा, जहां उसकी बहन रहती थी। उसने अपनी बहन को सन्देश भेजा कि वह आकर उसे मिले। परन्तु वह इन्तज़ार करता रहा और उसकी बहन न आई, क्योंकि वह जान चुकी थी कि अब उसका भाई राज्य से निर्वासित एक भिखारी के समान है।

इस घटना से राजकुमार के मन में गहरा धक्का लगा। अब वह अच्छी तरह समझ गया कि सब नाते-रिश्ते धन के ही साथ होता है। और यही साधु की तीसरी अनमोल सीख थी।

राजकुमार ने मन-ही-मन साधु को लाख-लाख धन्यवाद दिया और अपने भाग्य की तलाश में आगे बढ़ा।

अंत में वह एक ऐसे राज्य में पहुंचा जहां कुछ दिनों पहले राजा की मृत्यु हो चुकी थी और किसी उत्तराधिकारी के न होने से वे किसी राजा की खोज में थे।

उन्होंने एक सजा-धजा शाही हाथी राजमार्ग पर छोड़ दिया था और यह घोषणा की थी कि हाथी जिसे उठाकर अपनी सवारी करा देगा, वही नया राजा होगा। आश्चर्य की बात, ज्यों ही हाथी ने राजकुमार को आते देखा, उसने तुरन्त सूंड से उठाकर उसे सवार करा लिया। राजकुमार तो आश्चर्य-चकित रह गया। लोगों की जय-जयकार के बीच उसे राजमहल में लाया गया और उसका राज्याभिषेक कर दिया गया।

अयोध्या के देवता कुल्लू में

आज से वर्षों पहले की घटना है। तब कुल्लू का राजा जगतसिंह था। राजा के पास धन-दौलत, पत्नी-पुत्र, घोड़े-हाथी, प्रजा-राज्य सब कुछ था। बस कमी थी—सदाचार की, दया की। राजा अपनी स्वेच्छाचारिता के लिए बदनाम था। वह जिस किसी पर अत्याचार ढा देता। जो उसे अच्छा लगता, उसे छीन लेता। किसी की धन-सम्पत्ति, बहू-बेटी उसके राज्य में सुरक्षित न थी। लोग मन-ही-मन उससे त्रस्त थे। पर प्रकट में क्या करते, क्या कहते ! आख़िर वह राजा ठहरा—सर्वशक्तिमान।

एक दिन राजा को मालूम हुआ कि उसके राज्य में एक ऐसा ब्राह्मण है, जिसके पास अनमोल रत्न है। बस, राजा की लार टपक पड़ी। सिपाही भेजकर ब्राह्मण को दरबार में बुलाया। ब्राह्मण नहीं आया। राजा ने उससे रत्न मंगवाए और साथ धमकी भी दी कि यदि उसने स्वयं भेंट न किए, तो रत्न छीन ही लिए जाएंगे, साथ ही उसे राजदण्ड भी मिलेगा।

ब्राह्मण भी सच्चा स्वाभिमानी था। उसने अपमान की बजाय आत्मबलिदान को श्रेष्ठ समझा। उसने अपने घर में आग लगाई और परिवार समेत जलकर भस्म हो गया। राजा के अत्याचारी मुख पर मानो यह करारी चपत थी।

उस दिन राजा जब भोजन करने बैठा, तो अपनी थाली में कीड़े चलते देख घबरा गया। वह कुछ भी न खा सका। बार-बार थाली बदलकर भोजन लाया गया। पर हर बार वही कीड़े। राजा भयभीत हो गया। पंडित-विद्वान बुलाए। उन्होंने कहा—"महाराज! आपको ब्रह्महत्या का पाप लगा है।"

"इसका निवारण कैसे होगा?" त्रस्त राजा ने पूछा। ब्राह्मणों ने उपाय बताया—"अगर अयोध्या से रघुनाथ जी की मूर्ति यहां लाई जाए और महाराज अपना राज्य उसे सौंपकर खुद दास बन राज-काज चलाएं—तभी ब्रह्महत्या का पाप दूर होगा।"

राजा अब सचमुच प्रायश्चित करना चाहता था। अतः उसने एक पंडित को इस कार्य के लिए अयोध्या भेज दिया। पंडित 'रघुनाथ मंदिर' में जाकर रहने लगा। उसने रघुनाथ जी की मूर्ति ले जाने का बहुत यत्न किया, पर असफल रहा। भला वहां के पुजारी अपने भगवान की मूर्ति क्यों ले जाने देते? आख़िर कुल्लू का पंडित उस मूर्ति को चुराकर भाग पड़ा। किन्तु चोरी भी कभी छुपी है! वह राह में ही पकड़ा गया। अब झगड़ा बढ़ गया। कुल्लू का पंडित मूर्ति को ले जाना चाहता था, जबकि अयोध्या का पण्डित अपनी मूर्ति देना नहीं चाहता था। आख़िर इसका एक हल ढूंढा गया। मूर्ति को बीच में रख दिया और बारी-बारी दोनों उसे उठाने लगे। पहले अयोध्या के पंडित ने उठाना चाहा, तो मूर्ति हिली तक नहीं। फिर कुल्लू के पंडित ने उठाया तो मूर्ति सहज में उठ गई।

अब यह स्पष्ट हो गया कि स्वयं रघुनाथ जी कुल्लू

जाने को उत्सुक थे। विजय-मुसकान के साथ पंडित जी कुल्लू में मूर्ति लेकर आ पहुंचे। बड़ी धूमधाम से मन्दिर में रघुनाथ जी की प्रतिष्ठा की गई। राजा ने भक्तिभाव से पूजा तथा प्रायश्चित किया। मूर्ति के सामने उसने संकल्प किया कि वह कभी भी पुराने दुष्कृत्यों को नहीं दुहराएगा। उसके पश्चात् वह दोष-मुक्त हुआ। तब से 'श्री रघुनाथ जी' के अधीन सब देवता कुल्लू में निवास करने लगे। हिमाचलवासियों का विश्वास है कि दशहरे पर कुल्लू में सब देवता पूजा ग्रहण करते हैं !

नहले पर दहला

एक बार दो विलक्षण मित्र थे। एक अन्धा था, तो दूसरा कुबड़ा। दोनों एक साथ रहते। साथ-साथ भीख मांगने जाते। कुछ काम वे कर न सकते थे। बस, मांगकर गुज़ारा चला लेते। कुबड़ा देखता कि अन्धे को उससे ज्यादा पैसे मिलते हैं। रोज़ रात सोने से पहले अन्धा अपनी दिन भर की कमाई गिनकर एक डिब्बे में डाल लेता। पैसे की टंकार प्रतिदिन बढ़ती ही जाती। इसके साथ ही कुबड़े के दिल की धड़कन बढ़ जाती।

आख़िर उससे रहा न गया। एक दिन वह अन्धे के पास आकर अपना दुखड़ा रोने लगा, कि कुबड़ा समझ उसे कोई पैसे नहीं देता। अगर अन्धा उसे साथ रख ले, तो वह उसका काम कर देगा और रोटी खा लेगा। अन्धे को दया आ गई। यह भी सोचा कि उसकी आंखों का फ़ायदा मुझे भी मिलेगा। बस, कुबड़ा उसके साथ रहने लगा। वह सुबह जल्दी उठता और झाड़ू बुहारी देकर रोटी पका देता। अन्धे को पकी-पकाई रोटी मिलने लगी। दोनों के दिन सुख से बीतने लगे।

लेकिन कुबड़े को इस पर चैन न था। वह तो कुछ और चाल चलना चाहता था। एक दिन उसने दांव लगाया। जिस

रास्ते से वह भीख मांगने जाते, वहां एक टीला था, जिसपर फिसलन रहती थी। एक दिन शाम के झुटपुटे में जब वे वहां से आ रहे थे, तो कुबड़े ने अन्धे का हाथ छोड़ दिया और उसे नीचे की ओर धकेल दिया। बेचारा अन्धा ढेले की तरह नीचे को लुढ़कने लगा। बचाव के लिए उसने हाथ-पांव मारे। किस्मत की बात उसका हाथ एक झाड़ी पर पड़ गया। उसने कसकर झाड़ी को पकड़ा और लगा चिल्लाने। कुबड़े को व्याकुल होकर पुकारने लगा। जाने कैसे उसकी पुकार से कुबड़े का दिल पिघल गया और उसने भागकर उसे ऊपर की ओर खींच लिया।

सांस-में-सांस आने के बाद अन्धे ने पूछा—"क्यों बे कुबड़े? तूने मुझे धक्का क्यों दिया?"

अब तक कुबड़ा भी जवाब सोच चुका था। बोला—"नहीं भाई, मैंने तुम्हें धक्का नहीं दिया। वह तो मेरे पांव में कांटा चुभ गया था। इसलिए तुम्हारा हाथ मुझसे छूट गया और धक्का लग गया।"

अन्धा चुप रहा। पर मन-ही-मन भांप गया कि इस आस्तीन के सांप से होशियार रहना होगा। कुछ दिन और बीत गए। एक दिन कुबड़े ने नई चाल सोची जिससे 'हींग लगे न फिटकरी, रंग चोखा आवे' वह कहीं से एक मरा हुआ सांप उठा लाया। उसके टुकड़े करके कढ़ाई में पकने रख दिया और अन्धे से कहा—"आज मैं खाने के लिए मछली लाया हूं। मैं ज़रा काम से बाहर जा रहा हूं। तुम इसे हिलाते रहना और जब पक जाए तो मेरे हिस्से को रखकर, तुम खा लेना।"

कुबड़ा तो चला गया। उसने सोचा—अब अन्धा अपने

हाथों मरेगा और उसके लौटने तक मैदान साफ़ होगा। उसके कानों में अन्धे के जमा किए रुपयों की टंकार गूंजने लगी।

उसके जाने के बाद अन्धे ने कलछी से सांप के टुकड़ों को हिलाना शुरू कर दिया। उससे जो भाप उड़ी, तो उसकी आंखों से लगातार पानी बहने लगा। थोड़ी देर बाद उसे ऐसा लगा—मानो सब कुछ दिखाई देने लगा है। अचानक उसकी आंखों में रौशनी लौट आई थी। हैरान-सा होकर उसने चारों ओर देखा। पहली नज़र कढ़ाई पर पड़ी, तो वह चीख़ मार उठा। कढ़ाई में सांप के टुकड़े पड़े थे। और यह उन्हीं की ज़हरीली भाप का असर था कि उसकी आंखें देखने लगी थीं। "लेकिन वह कमबख़्त कुबड़ा तो मेरे मरने का पक्का इन्तज़ाम कर गया था। आने दो इसे...आज मैं इसका कूबड़ा तोड़कर रख दूंगा।"

अन्धे ने मोटा डंडा पकड़ा और दरवाज़े के पीछे छुपकर खड़ा हो गया। काफी रात हो जाने पर कुबड़ा खुशी-खुशी घर लौटा। ज्योंही उसने दरवाज़े के अन्दर कदम रखा कि अन्धे के डंडे ने धमाधम पीटना शुरू कर दिया। पीट-पीटकर जब उसे धरती पर गिरा दिया, तब उसके हाथ रुके।

अब अन्धा बोला—"क्यों बे धोखेबाज़! मुझे मार डालने को सांप के टुकड़े कढ़ाई में डाल गया था। वह तो मेरे भाग अच्छे थे कि उस सांप की भाप से मेरी आंखें ठीक हो गईं और मैं तेरे षड्यंत्र से बच गया।"

अब कुबड़े ने सर उठाकर अन्धे का मुंह देखा। तुरन्त बात बनाकर बोला—"दोस्त, तूने फिर मुझे ग़लत समझा। देख, मैं तेरे अन्धेपन का इलाज करने को ही सांप के टुकड़े कढ़ाई में डाल गया था।"

अन्धा भी अब उसकी चालाकी समझ चुका था। उसने

भी नहले पे दहला लगाया—"तो मैंने भी तेरा कूबड़ ख़त्म करने के लिए ही तुझे डंडे से पीटा है।"

अब कुबड़े की चौंकने की बारी थी। वह झटपट उठकर खड़ा हुआ। सचमुच उसका कूबड़ चला गया था। अब तो दोनों मित्र हंसते-हंसते लोट-पोट हो गए।

भाग्य जाग उठा

बिनवा और हिनवा दो भाई थे। बिनवा बड़ा था और हिनवा छोटा। बड़ा भाई जितना चालाक था, छोटा उतना ही भोला। बिनवा उससे खेती करवाता, पशु चरवाता और खुद मटरगश्ती करता। हिनवा सरल-चित्त और मेहनती था। वह बड़े भाई की चालाकी न समझ पाता। हां, एक बात ज़रूर उसे खटकती रहती कि वह कितनी भी मेहनत क्यों न करता, उसे रोज़ दोनों समय सूखी चार रोटियां ही खाने को मिलतीं।

एक दिन हमेशा की तरह वह सुबह खेत को चला गया। थोड़ी देर बाद उसे याद आया कि वह बीज की टोकरी घर पर ही भूल आया है। हल चलाना रोककर वह घर की ओर चल दिया। जब वह घर पहुंचा, तो भाई-भाभी घर न थे—शायद कहीं पड़ोस में बैठे होंगे। वह अन्दर घुसा, तो रसोई के पास से गुज़रते हुए पकवानों की सुगन्ध ने उसके पांव रोक लिए। कौतूहल से वह भीतर गया और यह देखकर चकित रह गया कि वहां भांति-भांति की सब्ज़ियां, परांठे और खीर बनी पड़ी थी। पहले तो वह समझ न पाया कि ये पकवान किसके लिए हैं? उसने तो आज तक एक बार भी इनमें से कुछ न चखा था। आज न कोई व्रत-त्योहार था और न ही घर में कोई

मेहमान आया था! तब यह सब किसके लिए था?

धीरे-धीरे वह समझ गया कि उसे खेत में जोत कर पीछे उसके भाई-भाभी मज़े से खाते-पीते हैं। उसका मन एकदम खट्टा हो गया। जिनके लिए वह जी तोड़कर कमाता था, वही उससे यूं धोखा करेंगे? यह ख्याल उससे सहन न हुआ। जी चाहा अभी हल-कुदाल फेंककर घर से दूर चला जाए।

डगमगाते कदमों से वह खेत पर लौट आया। बेमन से काम किया। शाम होते ही घर पहुंचने पर भाभी ने उसे वही चार रोटियां परोस दीं। अब उससे रहा न गया। बोला—"भाभी आज तो घर में अच्छी सब्ज़ियां, परांठे और खीर बनी है। फिर मेरे लिए यह सूखी रोटियां ही क्यों?"

उसका प्रश्न सुन भाभी चौंक पड़ी। आज तक हिनवा ने ऐसा सवाल नहीं किया था। पास ही बिनवा बैठा था। उसने कुटिल मुस्कराहट से उत्तर दिया—"हिनवा! इसका कारण है कि तुम्हारा भाग्य सात समुद्र पार सो रहा है। जब तक तुम उसे नहीं जगा लोगे, तब तक तुम्हें इन सूखी रोटियों पर ही रहना होगा।"

हिनवा ने कोई जवाब नहीं दिया। रोटियां वहीं छोड़ वह चल दिया। भाई-भाभी ने रोकना चाहा लेकिन अब अधिक देर तक वह इस अन्याय को न सह सकता था। उसे विश्वास हो गया कि सोया भाग्य जगाए बिना उसे दुनिया में कोई सुख नहीं मिल सकता।

चलते-चलते जंगल में पहुंच गया। अचानक उसने देखा—एक पेड़ पर सांप चढ़ रहा था और उसका निशाना ऊपर आलने में पड़े गीध के अंडे थे। हिनवा ने तुरन्त तलवार से सांप को कुचल डाला और उन अंडों को बचा लिया। थका-मांदा तो

था ही। वह वहीं सुस्ताने लगा। शाम को जब गीध-गीधनी पेड़ पर लौटकर आए, तो पेड़ के नीचे मरे सांप और उस नवयुवक को देख सब समझ गए। उन्होंने नौजवान को बहुत धन्यवाद दिया और पूछा कि वह कौन है और कहां जा रहा है?

हिनवा ने अपनी रामकहानी सुना दी। गीध ने कहा—"तुम्हारा सात समुद्र पार जाना मुश्किल है। आओ, मैं अपनी पीठ पर तुम्हें वहां ले जाता हूं।" हिनवा बड़ा खुश हुआ। दोनों चल पड़े। रास्ते में एक बड़ा पेड़ आया, जो बिल्कुल सूखा था। उसने इनका रास्ता रोककर पूछा कि कहां जा रहे हो? हिनवा के बताने पर पेड़ ने कहा—"मेरा भी एक प्रश्न भाग्य से पूछ आना कि सब पेड़ों पर हरे पत्ते आते हैं। मैं ही क्यों सूखा रहता हूं?

उड़ते-उड़ते गीध सात समुद्र पार पहुंच गया और हिनवा को वहां पहुंचा दिया, जहां सचमुच उसका भाग्य पड़ा सो रहा था। हिनवा ने भाग्यदेव को जगाया और अपने दुर्भाग्य को दूर करने की प्रार्थना की। भाग्यदेव मान गया, तभी उसने उस सूखे पेड़ का भी प्रश्न पूछा। उत्तर में भाग्य ने बताया कि उस पेड़ के नीचे ख़ज़ाना गड़ा हुआ है और उसकी रक्षा करने पेड़ की ख़ोल में बड़ा सांप बैठा है। उस सांप को मारकर वह ख़ज़ाना ले लो, तो पेड़ भी हरा हो जाएगा और हिनवा का दुर्भाग्य भी दूर हो जाएगा।

अब तो हिनवा खुशी-खुशी वापस लौटा। गीध ने उसे सकुशल सात समुद्र पार करा दिए। पेड़ के पास पहुंचते ही उसने ख़ोल में छिपे सर्प को मार डाला और नीचे गड़ा खजाना निकाल लिया। अब वह बड़ा धनवान युवक था। चलते-चलते

वह एक ऐसे राज्य से गुजरा, जहां की राजकुमारी कई दिनों से बीमार थी। राजा ने ढिंढोरा दे रखा था कि कोई भी उसकी बेटी को निरोग करके मुंहमांगा इनाम पा सकता था।

हिनवा कौतूहलवश राजकुमारी को देखने चला गया। उसे कुछ जड़ी-बूटियों का ज्ञान था। उसके अनुसार उसने दवाई बनाकर राजकुमारी को खिला दी। किस्मत की बात, दवाई ने चमत्कार किया। राजकुमारी बिलकुल स्वस्थ हो गई। अब तो राजा ने हिनवा को अपना दामाद बना लेना चाहा। बड़ी धूमधाम से हिनवा का विवाह राजकुमारी से हो गया। हिनवा का भाग्य सचमुच जाग उठा।

●●●

देश-विदेश की सचित्र लोककथाएं

हिमाचल की लोककथाएं
बिहार की लोककथाएं
राजस्थान की लोककथाएं
बंगाल की लोककथाएं (पुरस्कृत)
हरियाणा की लोककथाएं (पुरस्कृत)
पड़ोसी देशों की लोककथाएं
असम की लोककथाएं
पंजाब की लोककथाएं
मध्यप्रदेश की लोककथाएं
उत्तर प्रदेश की लोककथाएं

प्रेमचन्द की सरल, सचित्र बाल कहानियां

बूढ़ी काकी
बड़े घर की बेटी
सुजान भगत
परीक्षा
शतरंज के खिलाड़ी
दो बैलों की कथा
मां की ममता
शिकारी राजकुमार
गुल्ली-डण्डा
रानी सारंधा
नमक का दरोग़ा
रामलीला
पंच परमेश्वर
मन्दिर
ईद का त्योहार
सबसे बड़ा तीर्थ
कुत्ते की कहानी
मेरी कहानी
रामकथा
जंगल की कहानियां

रवीन्द्रनाथ टैगोर की सरल बाल-कहानियां

भोला राजा
काबुलीवाला
पारसमणि
मास्टरजी
तोते की कहानी
राजा का न्याय

'स्वदेश-परिचय' पुस्तकमाला

● *डॉ. भगवतशरण उपाध्याय*

भारतीय संस्कृति की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय चित्रकला की कहानी
भारतीय भवनों की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय संगीत की कहानी (पुरस्कृत)
कितना सुन्दर देश हमारा (पुरस्कृत)
भारत की कहानी (पुरस्कृत)
भारतीय नगरों की कहानी
भारतीय साहित्य की कहानी
भारतीय नदियों की कहानी
हमारे पड़ोसी (पुरस्कृत)

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली